हमारी शक्ति का पांचवां भाग

अखंड ज्योति सितम्बर 1942

अखंड ज्योति 1942 के सितम्बर अंक में प्रकाशित हुए लेख में परम पूज्य गुरुदेव ने मनुष्य की धर्मिक एवं आर्थिक शक्ति को औसत भारतीय की शक्ति का “पांचवां भाग” कह कर समझाया है। यह लेख अखंड ज्योति के आरंभिक अंकों का मास्टरपीस लेख कहा जा सकता है। अखंड ज्योति अपना उत्तरदाईत्व इतने वर्षों बाद, आज भी निभा रही है। अनेकों साथिओं का मार्गदर्शन कर रही है।

लेख में वर्णित जिस गणित को समझने में हमें कई दिन और समय लगा, साथिओं के लिए इतना ही कहना चाहेंगें कि औसत भारतीय अपने परिवार,नौकरी आदि की सारी ज़िम्मेदारियाँ सँभालते हुए भी, धर्म-कर्म के लिए समय निकाल ही रहा था/रहा है। इसी लीक पर चलते हुए कहा जा सकता है कि आर्थिक निर्धनता के बावजूद,औसत भारतीय धर्म-कर्म के लिए आर्थिक सहयोग देने से कभी भी पीछे नहीं हट रहा। गुरुदेव ने अपने गणित से इस सहयोग को धर्मिक और आर्थिक शक्ति का पांचवां भाग कहा है जो बहुत बड़ा भाग है। इसका कारण केवल एक ही है कि भारतवर्ष एक धर्मप्राण देश है और इसकी उन्नति का कारण धर्म ही है।

विज्ञान की दृष्टि से देखें, तो चाहे अरुण वर्मा जी अपनी पूजास्थली में गायत्री मंत्र का जाप कर रहे हों, शांतिकुंज में सामूहिक दैनिक

यज्ञ हो रहा हो, अश्वमेध यज्ञ में करोड़ों साधक आहुतियां डाल रहे हों, सभी प्रभाव ब्रह्माण्ड में बिखेरा जा रहा है। यह दिव्य प्रभाव उस नास्तिक को भी उसी Ratio में प्रभावित कर रहा है जिसने कभी मंदिर का द्वार भी न लांघा हो। ब्रह्माण्ड की सारी शक्तियां हर किसी के लिए उपलब्ध हैं लेकिन यह भी सत्य है कि TV (रिसीवर) का चैनल सिलेक्ट करने के लिए रिमोट से उस फ्रीक्वेंसी को भी तो सेलेक्ट करना आना चाहिए।

भारतवर्ष धर्मप्राण देश है, बहुत प्राचीन काल से यहाँ धर्म को जीवन का प्रमुख अंग माना जाता रहा है। कारण यह है कि हमारे तत्वदर्शी पूर्वज जानते थे कि मानव जीवन की “चतुर्मुखी उन्नति का केन्द्र धर्म ही है।” जब संसार के अन्य भागों में मनुष्य जंगली जीवन व्यतीत कर रहे थे, तब से धर्म की धारणा के कारण ही हमारा देश विश्व का मुकुटमणि बना हुआ है। शारीरिक, आर्थिक, सामाजिक, बौद्धिक उन्नति की सर्वोच्च श्रेणी पर भारतवासी पहुँचे हुए थे। स्पष्ट ही धर्म का पालन एक प्रत्यक्ष व्यापार है, जिसका सुफल अविलम्ब प्राप्त होता है। धर्म का निश्चित फल सुख ही है। दूसरे शब्दों में यों कह सकते हैं कि जिस मार्ग पर चलने से लौकिक और पारलौकिक सुख मिलता है, उसे धर्म कहते हैं।

जब हम अपनी दुर्दशा पर विचार करते हैं तो हमें यह देखने के लिये बाध्य होना पड़ता हैं कि कहीं हमने धर्म का परित्याग तो नहीं

कर दिया है, जिससे, दीनता, दासता, अज्ञान और दुःखों की चक्की में पिसते हुए छटपटाना पड़ रहा है।

चिकित्सा से पहले रोग का कारण जानना आवश्यक होता है।

विश्वभर के गणितज्ञों ने हिन्दू जाति की धार्मिक अवस्था पर गहरी रिसर्च की है और हिसाब लगा कर बताया है कि घर-घर में हो रही दैनिक संध्या, पूजा, जप, कीर्तन,कर्मकाण्ड, संस्कार, मन्दिर दर्शन, कथाश्रवण, शास्त्रपठन,धार्मिक शिक्षा के लिए सर्वसाधारण का जो बहुत सारा समय खर्च होता है और साधु, सन्त, पुरोहित, पुजारी, उपदेशक आदि का जो पूरा समय खर्च होता है, इस सारे समय को जोड़ कर यदि सारे भारतीयों में बांटा जाय तो हर व्यक्ति के हिस्से में पौने तीन घंटे का समय पड़ता है। निद्रावस्था को छोड़ कर शेष समय का यह करीब “पाँचवाँ भाग” है। 1942 के आंकड़ों के अनुसार, इसी प्रकार उपरोक्त कार्यों एवं व्यक्तियों के ऊपर करीब 2 अरब 96 करोड़ रुपया प्रति वर्ष व्यय होता है। इसकी औसत हर भारतीय के ऊपर डेढ़ पैसा प्रतिदिन पड़ता है। देश की औसत आमदनी दो आना रोज है। इस तरह सारी आमदनी का “पाँचवाँ भाग” धर्म के लिये खर्च किया जाता है। एक शब्द में यों कह सकते हैं कि हम लोग अपनी सम्पूर्ण शक्ति का “पाँचवाँ भाग” धर्म के निमित्त लगाते हैं।

“पाँचवाँ भाग” बड़ी भारी शक्ति है। अन्य देशों में फौजी तथा भीतरी सम्पूर्ण व्यवस्था के लिये मजबूत सरकारें अपने देश की आमदनी का दसवें से भी कम भाग खर्च करती है। कहते हैं कि इस समय युद्ध में लगे हुए राष्ट्रों में सब से अधिक खर्च करने वाला देश जर्मनी अपनी राष्ट्रीय आय का पाँचवाँ भाग युद्ध एवं राज्य व्यवस्था में खर्च कर रहा है। यों समझिए कि यदि हिन्दू जाति को जर्मनी के समान किसी बड़े भीषण युद्ध में संलग्न होना पड़ता तो उस समय अधिक से अधिक इतना ही खर्च करना पड़ता जितना आज (1942) हम लोग धर्म के लिये कर रहे हैं। अमेरिका आदि कुबेर समान धनी देशों के ईसाई मिशन संसार भर में अपना मजहब फैलाने के लिए बहुत बड़ी धनराशि व्यय करते हैं लेकिन वह भी हमारे खर्चे की तुलना में कम है। जितने पैसे से दर्जनों यूनीवर्सिटी, पचासों कालेज, सैकड़ों हाईस्कूल, हजारों पाठशालायें चल सकती हैं, उतना पैसा एक-एक पर्व पर पुण्य लाभ के निमित्त भारत में खर्च होता है। जितनी पूँजी से उद्योग धन्धे आरम्भ करके अधपेट खाने वाले गरीब मनुष्य और भूख की ज्वाला से तड़फ-तड़फ कर प्राण देने वाले युवकों को नौकरी दी जा सकती है, इतना पैसा प्रति वर्ष मन्दिरों के सजाव, श्रृंगार, भोग, भक्ति में खर्च हो जाता है।

गुरुदेव के Figures के अनुसार 1942 में जब यह लेख प्रकाशित हुआ था,औसत भारतीय की आय दो आना प्रतिदिन,अर्थात 60 आने प्रतिमाह होती थी। ऑनलाइन ज्ञानरथ गायत्री परिवार के वरिष्ठ साथी जानते होंगें कि एक रुपए में 16 आने होते हैं, उस गणित से औसत आय पौने चार रुपए प्रतिमाह बनती है। यहाँ पर महत्त्व इस बात का है कि इस आर्थिक स्थिति में भी रहते हुए, भोजन, वस्त्र, आवागमन, दवादारु तथा अन्य जीवनोपयोगी आवश्यकताओं को किसी प्रकार जैसे-तैसे पूरा करते हुए, अधिकतर भारतीय “पाँचवे भाग”   से अधिक समय एवं शक्ति को परमार्थ के लिए लगाने को तत्पर थे। निस्सन्देह भारतीय इस गई गुज़री दशा में भी धर्म के लिए जितना त्याग कर रही है, उसका उदाहरण संसार में अन्यत्र कहीं भी मिल सकना कठिन है।

समर्पण और श्रद्धा के अनेकों उदाहरण आज के आधुनिक युग में भी अक्सर मिलते आ रहे हैं। हमारा छोटा सा समर्पित परिवार, “ऑनलाइन ज्ञानरथ गायत्री परिवार”   ऐसे अनेकों उदाहरणों से सुशोभित है,जिसके लिए हम उन्हें बधाई देने में गर्व महसूस करते हैं।

गुरुदेव कहते हैं कि इतना होते हुए भी मनुष्य दिन-ब -दिन नीचे ही गिरता जा रहा है। शास्त्र कहता है:

"धर्मो रक्षति रक्षितः" जिसका अर्थ है जो धर्म का नाश करता है, उसका नाश धर्म करता है और जो धर्म की रक्षा करता है, उसकी रक्षा धर्म करता है। इसलिए धर्म का नाश नहीं करना चाहिए,कहीं ऐसा न हो कि नष्ट हुआ धर्म हमारा नाश न कर दे।

यह श्लोक धर्म के महत्व और धर्म की रक्षा करने के परिणाम को दर्शाता है।

हम धर्म की रक्षा कर रहे हैं लेकिन धर्म हमारी रक्षा क्यों नहीं करता?

इस गम्भीर प्रश्न ने आज (1942) तीस करोड़ हृदयों में खलबली पैदा कर दी है। देश के विचारवान व्यक्ति धर्म की इस पेचीदगी से बहुत ही चिन्तित हो रहे हैं। धर्म की गुत्थी जब सुलझती नहीं, तो विवश होकर हमारे नौनिहाल/युवा पीढ़ी उसे ढोंग, पाखंड, जालसाज़ी , धोखेबाजी, भ्रमपूर्ण कल्पना आदि नामों से सम्बोधन करते हैं और उसके विरुद्ध बगावत का झंडा बुलन्द करते हैं।

हम देख रहे हैं कि भारत की भावी पीढ़ी "धर्म के विरुद्ध" तूफानी बगावत को हवा दे रही है,नास्तिकता को अपना रही है। आशंका है कि कहीं उस प्रचण्ड बाढ़ में आर्य सभ्यता के प्राचीन गौरवमय सिद्धान्त भी न बह जाएं। कौन जानता है कि हमारे देश

के नौजवान अपने समय के धर्म की निरर्थकता, नपुँसकता और निरुपयोगिता से झुँझलाकर उसे चूर-चूर न कर डालेंगे।

गुरुदेव के प्रयासों से जिस स्थिति पर हम आज 2025 में खड़े हैं, उससे हर कोई परिचित है। युवापीढ़ी के अनेकों संगठन जिस गति एवं शक्ति से सक्रीय हैं उन्हें हम नमन किये बिना नहीं रह सकते। हमारे बिहार में ही आदरणीय मनीष भाई साहिब के प्रयास से प्रांतीय युवा प्रक्रोष्ठ कितना सक्रीय एवं शक्तिशाली है उससे हर कोई परिचित है।

गुरुदेव इस सारी क्रांति का श्रेय "अखंड ज्योति पत्रिका" को देते हैं। वह कह रहे हैं कि "अखंड ज्योति के जीवन का प्रधान उद्देश्य 'धर्म की सेवा' है। यह धर्म की पूजा के लिये ही प्रकट हुई है और इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए इसे जीवित रहना है। जिसका प्राण ही धर्म में पिरोया हुआ हो, वह अपने ईष्ट पर इस प्रकार की आपत्ति आते देखकर, उसे लाँछित और तिरस्कृत होते देखकर, मार्मिक वेदना का अनुभव करती है।

"प्रत्येक व्यक्ति धार्मिक बने" इस उपदेश के साथ हम धर्म के वर्तमान स्वरूप में शोधन भी करना चाहते हैं। हम अनुभव करते हैं कि सदियों की पराधीनता, गरीबी और अज्ञान ने धर्म के वास्तविक स्वरूप को बहुत ही दोषपूर्ण,जर्जरित एवं बिगाड़ कर रख दिया है। अनेक छिद्रों के कारण उसका वर्तमान स्वरूप

छलनी की तरह छिरछिरा हो गया है, जिससे राष्ट्र की उच्चतम सद्भावनाओं के साथ डाली हुई पञ्चमाँश(पांचवां भाग) शक्ति नीचे गिर पड़ती है और पश्चात्ताप और निराशा ही प्राप्त होती है। “सद्भावना से प्रेरित होकर आत्मोद्धार के लिए जो लोकोपकारी कार्य किये जाते हैं, वे धर्म कहलाते हैं।” धर्म की इस मूलभूत आधारशिला के ऊपर हमें देश काल की स्थिति के अनुसार नवीन कर्मकाँडों की रचना करनी होगी। दूध रखने के लिये छेदों वाले बर्तनों को हटाना होगा, जिनमें से सारा दूध बह कर मिट्टी में मिल जाता है।

ईश्वर की सच्ची उपासना उसकी चलती फिरती प्रतिमाओं से प्रेम करने में है।

परमार्थ की वेदी पर अपने निजी तुच्छ स्वार्थों को बलिदान करना धर्म है। धर्म और ईश्वर की सच्चे अर्थों में पूजा करने वाले व्यक्तियों का कार्यक्रम वर्तमान परिस्थितियों में अपने आस-पास छाये हुए अज्ञान और दारिद्र के घोर अन्धकार को दूर हटाना होगा।

अविद्या के कारण हमारी कौम अंधेरे में टकराती फिर रही है, दरिद्रता के कारण हमारा देश पशुओं से भी गया गुज़रा दयनीय जीवन बिता रहा है। जिसके हृदय में धर्म है उसके हृदय में दया करुणा और प्रेम के लिये स्थान अवश्य होगा। जो व्यक्ति धर्म के नाम पर माला तो सारे दिन जपता है लेकिन बीमार पड़ोसी की

सेवा के लिये आधा घंटा की भी फुरसत नहीं पाता, हमें संदेह होगा कि वह कहीं धर्म की विडम्बना तो नहीं कर रहा है।

हम प्रत्येक धर्मप्रेमी से करबद्ध प्रार्थना करते हैं कि धर्म के वर्तमान विकृत रूप में संशोधन करें और उसको सुव्यवस्थित करके पुनरुद्धार करें। धर्माचार्यों और आध्यात्म शास्त्र के तत्वज्ञानियों पर इस समय बहुत भारी उत्तरदायित्व है। देश को मृत से जीवित करने का, पतन के गहरे गर्त में से उठाकर समुन्नत करने की शक्ति उनके हाथ में है, क्योंकि जिस वस्तु (समय और धन) से कौमों का उत्थान होता है, वह धर्म के निमित्त लगी हुई हैं। जनता की श्रद्धा धर्म में है और उसका प्रचुर द्रव्य धर्म में लगता है। धर्म के लिये 56 लाख साधु संत तथा उतने ही अन्य धर्मजीवियों की सेना पूरा समय लगाये हुए है। करीब एक करोड़ मनुष्यों की धर्म सेना, करीब तीन अरब रुपया प्रतिवर्ष की आय, कोटि-कोटि जनता की आन्तरिक श्रद्धा, इस सब का समन्वय धर्म में है।

इतनी बड़ी शक्ति यदि चाहे तो एक वर्ष के अन्दर ही अपने देश में रामराज्य स्थापित कर सकती है,मोतियों के चौक, घर-घर सोने के कलश रखे जाने तथा दूध दही की नदियाँ बहने के दृश्य कुछ ही वर्षों में दिखाई दे सकते हैं। आज के पददलित भारतवासियों

की सन्तान अपने प्रातः स्मरणीय पूर्वजों की भाँति पुनः गौरव प्राप्त कर सकती है।

अखंड ज्योति धर्माचार्यों को सचेत करती है कि वे राष्ट्र की पंचमाँश शक्ति के साथ खिलवाड़ न करें। टन-टन पों-पों में, ताता थइया में, खीर-खाँड़ के भोजनों में, पोथी पत्रों में, घुला-घुला कर जाति को और अधिक नष्ट न करें, इस ओर से हाथ रोककर इस शक्ति को देश की शारीरिक, आर्थिक, सामाजिक, मानसिक शक्तियों की उन्नति में नियोजित कर दें। अगर ऐसा न किया तो भावी पीढ़ी इसका बड़ा भयंकर बदला लेगी। आज के धर्माचार्य कल गली-गली में दुत्कारे जायेंगे और भारतभूमि की अन्तरात्मा उन पर घृणा के साथ थूकेगी कि मेरी घोर दुर्दशा में भी यह ब्रह्मराक्षस कुत्तों की तरह अपने पेट पालने में देश की सर्वोच्च शक्ति को नष्ट करते रहे थे। साथ ही अखंड-ज्योति सर्वसाधारण से निवेदन करती है कि वे धर्म के नाम पर जो भी काम करें उसे उस कसौटी पर कस लें कि **“सद्भावनाओं से प्रेरित होकर आत्मोद्धार के लिये लोकोपकारी कार्य होता है या नहीं।”** जो भी ऐसे कार्य हों वे धर्म ठहराये जाएँ, अधर्म का परित्याग कर दिया जाय।

देश के प्रत्येक निवासी का ध्यान इस और आकर्षित होना राष्ट्रीय जागरण का प्रथम चिन्ह होगा कि हमारी सामूहिक शक्ति का

सर्वोच्च पंचम भाग किन कार्यों में, किस प्रकार,किनके द्वारा और क्यों व्यय होता है? इसका परिणाम क्या निकलता है? इसमें क्या दोष आ गये हैं? उनमें क्या सुधार हो सकता है?

भारतीयों के कल्याण का प्रथम मार्ग यह है कि वह अपनी नाड़ियों में दौड़ रहे रक्त के पांचवें भाग को अपव्यय होने से बचाएं और उसका सदुपयोग करके शक्ति संपादित करे।

समापन